सन्शाइन छत पर

शाम्भवी क्रिश्चन द्वारा लिखित

श्री मुक्तानन्द आश्रम, शहर से दूर ग्रामीण क्षेत्र में स्थित है। आश्रम का बहुत-सा भाग वन-क्षेत्र है—सघन वृक्षों से भरा, नन्हें पौधों व फैली हुई बेलों के आवरण से ढँकी भूमि और चमचमाती हुई जलधाराएँ। यह सब ऐसे वातावरण का निर्माण करता है जो साधना के अनुकूल है . . . और वन्य जीवों के अनुकूल भी! ऐसे वातावरण में, वन्य जीव सहज ही गुरुमाई जी के सान्निध्य में आ जाते हैं और गुरुमाई जी उनके। सौभाग्य से, इनमें से अधिकतर प्राणी मित्रवत् हैं।

हाल ही में, गुरुमाई जी ने इनमें से एक ऐसे पशु के बारे में बहुत ही अद्‌भुत प्रसंग मुझे सुनाया जिससे मुझे विशेष रूप से प्रेम है।

सन् २०१९ में, वसन्त ऋतु की शुरुआत हुई ही थी। एक सुबह गुरुमाई जी टहल रही थीं। वे नित्यानन्द झील के पास एक रास्ते पर मुड़ने ही वाली थीं कि अचानक उन्हें एक आवाज़ सुनाई दी जो स्पष्टरूप से संकेत कर रही थी कि कोई मुसीबत में है। यह जानने के लिए कि वास्तव में यह किसकी आवाज़ है और किस ओर से आ रही है, गुरुमाई जी वहीं रुक गईं।

गुरुमाई जी वहाँ खड़े होकर, उस पीड़ाभरी आवाज़ को पहचानने का प्रयास करने लगीं जो अब इतनी कर्कश हो गई थी मानो कोई चुड़ैल विलाप कर रही हो। गुरुमाई जी ने सोचा, हो सकता है यह किसी पशु की आवाज़ हो जिसे मदद की ज़रूरत है। अतः गुरुमाई जी ने रास्ता बदला और सैर के लिए अपने निश्चित स्थान की ओर जाने के बजाए वे, मदद के लिए पुकारती उस आवाज़ की दिशा में जाने लगीं।

यद्यपि गुरुमाई जी को ऐसा लग रहा था कि वह आवाज़ और भी ऊँची होती जा रही है, परन्तु काफ़ी समय तक उन्हें उस आवाज़ के स्रोत का पता नहीं चल पाया। आवाज़ बस तेज़, अधिकाधिक तीव्र होती ही जा रही थी और ऐसा स्पष्टरूप से लग रहा था कि उस जीव का दर्द और भी बढ़ता जा रहा है। गुरुमाई जी एक स्थान पर रुकीं और उन्होंने अपने चारों ओर घूमकर देखा, उनकी आँखें और कान उस पशु को ढूँढ़ रहे थे—घास में, झाड़ियों में, पेड़-पौधों में। *इतनी* अप्रिय आवाज़ निकालने वाले उस पशु को वे दस मिनट तक ढूँढ़ती रहीं। पूरा ध्यान केन्द्रित कर उसे ढूँढ़ने के बाद, आख़िरकार, गुरुमाई जी ने ऊपर देखा और पाया कि पास ही की एक-मंज़िला इमारत की छत पर कुछ बैठा हुआ है।

गुरुमाई जी और पास से देखने के लिए शीघ्रता से आगे बढ़ीं। उन्होंने देखा कि यह तो . . . एक बिल्ला है! उसके बाल सफ़ेद थे और उस पर नारंगी-भूरे रंग के धब्बे थे। वे जान गईं कि यह बिल्ला है कौन। वह 'सन्शाइन' था।

आप पूछ सकते हैं, "यह 'सन्शाइन' कौन है?" मैं आपको एक छोटी-सी कहानी सुनाती हूँ।

सन् २०१५ में पतझड़ का मौसम था। आश्रम परिसर में सैर करते समय, गुरुमाई जी को अकसर एक जंगली बिल्ला दिखाई देने लगा। वह अपने भोजन का मज़ा लेने नित्यानन्द झील के आस-पास मँडराता नज़र आता था। वह आश्रम के दूसरे भागों में भी घुस जाया करता जहाँ वह और भी अधिक मज़ेदार भोजन का आनन्द ले सकता था। वन्य क्षेत्र और लम्बी घास की अधिकता होने के कारण, आश्रम परिसर उस बिल्ले के लिए लज़ीज़ व्यंजनों से भरपूर था।

यह जान लेने के बाद कि यह बिल्ला हिंसक या उग्र नहीं है, और यह ग़ौर करने के बाद कि आश्रम परिसर में घूमते हुए वह अपने घर जैसा ही महसूस करता है [सचमुच—वह सब जगह जाता था, 'मौन मार्ग' पर चुपके-चुपके शिकार की खोज में फिरता, मन्दिर के पास के बगीचों में से अपना रास्ता पकड़ता, हर प्रांगण के एक-एक इंच को जाँचता-परखता], गुरुमाई जी सोचने लगीं कि कहीं वह एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन के स्टाफ़ का सदस्य तो नहीं बनना चाहता है!

अब, अवश्य ही मुझे आपको इसके पीछे की एक और कहानी बतानी होगी [आप चाहें तो इसे पूर्वकथा की पूर्वकथा कह सकते हैं]। इस कहानी में हैं, राधा और कृष्ण इवान्स, जो एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन के दीर्घकालिक स्टाफ़-सदस्य हैं। अभी कुछ ही समय पहले उन्होंने अपनी बिल्ली 'गोल्डन' को खो दिया था जो उन्हें इधर-उधर भटकते हुए मिली थी, परन्तु समय के साथ वह लगभग एक आश्रमवासी ही हो गई थी। गुरुमाई जी यह बात जानती थीं, इसलिए उन्होंने किसी को भेजकर राधा और कृष्ण से पुछवाया कि क्या वे इस *नए* बिल्ले को अपनाना चाहेंगे, जो काफ़ी विनम्र लगता है और यह बिल्कुल स्पष्ट था कि इस बिल्ले को आश्रम में रहने की इच्छा है। राधा और कृष्ण को यह बहुत सम्मानजनक महसूस हुआ और वे बिल्ले को गोद लेने व अपनाने के लिए बड़े उत्साहित व खुश थे।

कुछ समय बाद उन्होंने गुरुमाई जी से पूछा कि उन्हें उस बिल्ले को किस नाम से बुलाना चाहिए। उसके बालों के रंग के कारण गुरुमाई जी ने कहा, "मैं उसे सन्शाइन नाम दूँगी।" और उसके नाम की ही तरह सन्शाइन [जिसका हिन्दी में अर्थ होता है, 'सूर्य का प्रकाश' या 'धूप'] अकसर धूप के मज़े लेता हुआ नज़र आता था और विशेषकर झील के किनारे, उस स्थान पर जहाँ वह पास ही में राधा और कृष्ण के साथ रहता है।

मैं राधा और कृष्ण के घर से कुछ ही दूरी पर रहती हूँ और मैं खुशनसीब हूँ कि मैं और सन्शाइन अच्छे दोस्त बन गए हैं। हर बार जब मैं इस खूबसूरत साथी से मिलती हूँ, मैं सोचती हूँ कि आज उसका मिज़ाज कैसा रहेगा। क्या वह मीठा-सा म्याऊँ बोलेगा, मेरे पैरों पर टकराएगा, उछलेगा या अपना पेट सहलवाने के लिए उलट जाएगा? या वह सीधे ऊपर की ओर छलाँग लगाएगा जैसे कि उसे कोई झटका लग गया हो और चौंककर भाग जाएगा? क्या वह मुझे देखकर मुस्कराते हुए घुरघुराएगा, या मेरी तरफ़ देखने तक की मेहरबानी नहीं करेगा? पर इतना तो मैं जानती हूँ कि वह हमेशा मेरा *बहुऽऽऽत* ख़याल रखता है, क्योंकि कभी-कभी मुझे अपने दरवाज़े पर चूहे-गिलहरियों के आकार के उपहार रखे मिलते हैं; ऐसे उपहार तो मुझे सन्शाइन ही दे सकता है।

एक बात जो मैंने देखी है वह यह कि सन्शाइन को गुरुमाई जी के विषय में सभी कुछ पसन्द है। मैं अकसर सुनती हूँ कि राधा और कृष्ण, सन्शाइन से गुरुमाई जी के विषय में बातें करते हैं और उसे, उसके व गुरुमाई जी के बीच हुए परस्पर व्यवहारों की, मीठी बातों की याद दिलाते हैं। मुझे भी इस बात का पूरा विश्वास है कि सन्शाइन का *पसन्दीदा* खेल है, गुरुमाई जी को ढूँढ़ते हुए पूरे आश्रम में उछल-कूद करना—और फिर दूर से गुरुमाई जी को निहारते रहना। गुरुमाई जी ने मुझे बताया है कि कभी-कभी वे सोचती हैं *ओह, मैंने सन्शाइन को कितने समय से नहीं देखा।* और उसके बाद गुरुमाई जी को किसी से पता चलता है कि जब वे सन्शाइन के बारे में वैसा सोच रही थीं, ठीक उसी समय, उस व्यक्ति ने सन्शाइन को पास ही दुबककर बैठे और गुरुमाई जी को निहारते देखा था।

तो आइए, अब हम गुरुमाई जी और सन्शाइन की मूल कहानी पर वापस आते हैं—और इस विषय पर कि किस तरह गुरुमाई जी हमारे प्यारे-दुलारे स्टाफ़-सदस्य, सन्शाइन को छत की कगार पर बैठे, इस तरह विलाप करते हुए देख रही थीं जैसा केवल गहन पीड़ा की अवस्था में ही हो सकता था।

गुरुमाई जी ने सोचा, *अरे अरे, वह गिरने वाला है!* वे सन्शाइन को पुकारते हुए इमारत की ओर तेज़ी-से गईं, "सन्शाइन, ज़रा इन्तज़ार करो!"

सन्शाइन तुरन्त चुप हो गया और गुरुमाई जी की ओर देखने लगा; उसके चेहरे के भाव समझ में नहीं आ रहे थे। क्या उसकी आँखों में—एक चमक थी?

फिर भी, गुरुमाई जी का पूरा ध्यान इसी पर था कि सन्शाइन को उस समय के लिए अनिवार्य मदद पहुँचाई जाए। उन्होंने झील के किनारे बनी एक इमारत में रहने वाले एक अन्य स्टाफ़-सदस्य को बुलाया ताकि वे आकर सन्शाइन को नीचे उतारने में मदद करें।

कुछ मिनटों बाद, जब वे घटनास्थल पर पहुँचे तो गुरुमाई जी ने उन्हें दिखाया कि सन्शाइन कहाँ बैठा है। ये स्टाफ़-सदस्य भी सन्शाइन से भली-भाँति परिचित थे; उनके व इस बिल्ले के बीच बड़े स्नेहमय और विनोदपूर्ण सम्बन्ध थे। उन्हें जब भी सन्शाइन इधर-उधर दिखाई देता, वे उससे बातें करते, उसके साथ हँसी-मज़ाक़ करते और उसे खाना खिलाते।

उन स्टाफ़-सदस्य ने स्थिति का जायज़ा लिया।

"गुरुमाई जी," उन्होंने कहा, "मुझे यक़ीन है कि सन्शाइन को नीचे उतरना आता है! मैंने उसे इस छत पर कई बार चढ़ते देखा है। उसे बस थोड़ा मनाने की ज़रूरत है।" और फिर बिना कुछ और कहे उन्होंने मीठे स्वर में खुशामद-सी करते हुए, सन्शाइन को पुकारा, "प्या ऽ ऽ रे सन्शाइन। आ जाओ ऽ ऽ। चलो नीचे आ जाओ। तुम उतर सकते हो। चलो आ जाओ, सन्शाइन।"

पर इसका सन्शाइन पर कोई असर नहीं हुआ, वह टस से मस तक नहीं हुआ। अच्छा होता कि वे कुछ कहते ही नहीं। सन्शाइन वहीं बैठा रहा, वह ज़रा भी हिलने को तैयार नहीं था। और उन स्टाफ़-सदस्य के बार-बार मनाने का कुछ असर हुआ भी तो उलटा ही—कुछ ही क्षण बाद, सन्शाइन फिर से मुँह फाड़कर रोने-चिल्लाने लगा।

आख़िरकार, उन स्टाफ़-सदस्य को यह मानना पड़ा कि हो सकता है सन्शाइन सचमुच मुसीबत में हो। उन्होंने कहा, "गुरुमाई जी, मुझे लगता है उसे सचमुच मदद की ज़रूरत है। मेरे कमरे में एक सीढ़ी रखी है। मैं जाकर उसे ले आता हूँ ताकि मैं ऊपर चढ़कर सन्शाइन को नीचे ला सकूँ।"

सन्शाइन उन स्टाफ़-सदस्य को मुड़कर जाते हुए बड़े ध्यान से देखता रहा। जैसे ही वे उसकी नज़रों से ओझल हुए, सन्शाइन का चिल्लाना एकाएक बन्द हो गया। वह सुस्ती-से, आलस में भरकर चारों पैरों पर खड़ा हुआ, अपने पैर फैलाए और पीठ को ऊपर की ओर उठाते हुए बढ़िया-सी अँगड़ाई ली।

यह देखकर गुरुमाई जी को यक़ीन ही नहीं हुआ। उन्होंने अविश्वास में पलकें झपकाईं। और उसी एक क्षणांश में, सन्शाइन ग़ायब हो गया। वहाँ से रफ़ूचक्कर होकर वह नज़रों से ओझल हो गया, मानो कह गया हो, *मैं यहाँ से जा रहा हूँ!*

बात ऐसी थी कि सन्शाइन जानता था कि जब वे स्टाफ़-सदस्य अपनी सीढ़ी लेकर आएँगे तब वह भाग नहीं सकेगा। सारा मज़ा किरकिरा हो जाएगा—और साथ ही गुरुमाई जी के इतने लम्बे दर्शन का आनन्द भी चला जाएगा।

इस बीच, गुरुमाई जी सन्शाइन को फिर से ढूँढ़ने लगीं कि कहीं वह किसी नई मुसीबत में न फँस गया हो। उन्हें लगा कि उन्हें छत के नुकीले शिखर पर तेज़ी-से लहराती हुई एक रोएँदार नारंगी पूँछ की झलक दिखाई दी, इसलिए वे दौड़कर इमारत की दूसरी ओर गईं।

जब गुरुमाई जी उस तरफ़, छत की दूसरी ओर पहुँचीं तो उन्हें सन्शाइन तो मिला, लेकिन . . . वहाँ तो अलग ही नज़ारा था। वह वहाँ इतने सुकून से क्यों बैठा था? कुछ ही क्षणों पहले ऐसा लग रहा था कि इस बिल्ले पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा है, और अब ऐसा लग रहा था कि उसे दुनिया की कोई परवाह ही नहीं है। वह अब बेफ़िक्र होकर, चैन से आराम फ़रमा रहा था, जैसे सब कुछ उसी के हाथ में हो। चेहरे पर विजय का उल्लास लिए उसने गुरुमाई जी की ओर देखा।

इससे पहले कि अचानक बदले हुए इस घटनाक्रम को गुरुमाई जी परख पातीं, सन्शाइन फुर्ती से छत से सटे पेड़ की एक टहनी पर कूद गया। पलभर में ही उसने ज़मीन की ओर छलाँग मारी और फिर तेज़ी-से झाड़ियों में भाग गया। उसने मुड़कर देखा तक नहीं।

गुरुमाई जी ने बस अपना सिर हिलाया और एक मुस्कान के साथ कहा, "ग़ज़ब, सन्शाइन!"

उसी समय वे स्टाफ़-सदस्य हाँफते-हाँफते, अपने से दोगुनी लम्बी सीढ़ी लेकर वहाँ पहुँचे। उन्हें देखकर गुरुमाई जी ज़ोर-से हँसीं और कहा, "सन्शाइन ने कहा है, शुक्रिया, लेकिन मुझे तुम्हारी मदद की ज़रूरत नहीं है। वह एकदम ठीक है! वह अपने आप ऊपर से नीचे उतरा, और घने पेड़ों की ओर भाग गया।"

गुरुमाई जी के ऐसा कहते ही उन दोनों को सन्शाइन फिर नज़र आया। वह आराम से टहलता हुआ अपने अभिभावकों के घर की ओर जा रहा था। ऐसा लग रहा था कि वह अपने आप से बेहद खुश है क्योंकि पूरे पैंतालीस मिनट के लिए वह गुरुमाई जी का ध्यान पूरी तरह अपनी ओर आकर्षित रखने में सफल रहा।

गुरुमाई जी और वे स्टाफ़-सदस्य ताज्जुब के साथ सन्शाइन को सामने से जाते हुए देख रहे थे। गुरुमाई जी ने कहा, "बिल्ली तो बिल्ली ही रहेगी।"

© २०२२ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।